Educational Administration: Theory and Practice
2023, 29(2), 745-751
ISSN: 2148-2403
https://kuey.net/ **Research Article**

The Overall Appearance of the Wall Paintings of Braj on the Journey of Religion:

Sunil Kumar Sahu[1]*, Dr. Ramkrishna Ghosh[2]

[1]*Research Scholar, Department of Visual and Performing Arts, Mangalayatan University, Aligarh, Uttar Pradesh
[2]Associate Professor, Department of Visual and Performing Arts, Mangalayatan University, Aligarh, Uttar Pradesh

Citation: Sunil Kumar Sahu et al. (2023), The Overall Appearance of the Wall Paintings of Braj on the Journey of Religion:, *Educational Administration: Theory and Practice, 29(2) 745-751*
Doi: 10.53555/kuey.v29i2.8937

ARTICLE INFO

ABSTRACT

The wall paintings of Braj, a culturally rich region in Uttar Pradesh, embody centuries of religious devotion, mythology, and artistic expression. These paintings, found on temple walls, homes, and public spaces, narrate stories of Lord Krishna, who is central to Braj's spiritual heritage. This research explores the religious symbolism, themes, and evolution of Braj's wall paintings, emphasizing their role in shaping the region's cultural identity and religious journey. Braj, also known as Brajbhumi, holds immense religious significance as the birthplace and playground of Lord Krishna. The wall paintings of Braj are not just decorative art forms but serve as visual narratives of religious and cultural stories. These paintings have evolved over centuries, reflecting the spiritual journey of the region's inhabitants and their devotion to Lord Krishna.

Keywords: Braj, wall paintings, mythological culture, Krishna, cultural heritage.

धर्म की यात्रा करते बृज के भित्ति चित्रों का समग्र रूप

सुनील कुमार साहू शोधार्थी,दृश्य और प्रदर्शन कला विभाग
मंगलायतन विश्वविद्यालय, अलीगढ़

डॉ. रामकृष्ण घोष शोध निर्देशक, दृश्य और प्रदर्शन कला विभाग
मंगलायतन विश्वविद्यालय, अलीगढ़

शोध सारांश –जिस प्रकार अजंता के भित्ति चित्र बौद्ध धर्म को प्रचारित प्रसारित करते हैं उसी प्रकार सनातन धर्म के अनुपालन करने वाले अपने देव के निवास स्थल बृज क्षेत्र के मंदिरों में भगवान की लीला से संबंधित चित्रों का चित्रांकन किया गया। बृज के भित्ति चित्र पिछली कई सदियो से बृज भूमि में भक्ति रस का धारा बहाते चले आ रहे हैं। इन चित्रो को एक संकीर्ण दायरे में भक्ति भावना के उत्प्रेरक के रूप में देखा जाता रहा है। परंतु बृज में उपस्थित भित्ति चित्रों में ब्रज क्षेत्र के समग्र रूप की उपस्थिति एक ऐसे पटल को विकसित करती है जहां पर ये चित्र इतिहास एवं संस्कृति के संवाहक के रूप में उभर कर आते हैं।

भित्ति चित्रांकन की विभिन्न परम्पराओ का तारतम्य बृज क्षेत्र की संस्कृति से जोड़ने पर हम पाते है की भाव पक्ष और कला के पक्ष के सांस्कृतिक अन्वेषण के लिए आवशयक है की कुछ स्थापित तथ्यो को नकार कर उनके स्थान पर नए सत्य स्थापित किए जाये।

मुख्यशब्द –भित्तिचित्र, बृज संस्कृति, भित्ति चित्रांकन प्रमुख मंदिर, स्थल, संस्कृति, बृज चौरासी कोस, प्रादुर्वभाव, पिछवाई कला,सांझी कला, मेवाड़ चित्रकला, मुगल चित्रकला।

Copyright © 2023 by Author/s and Licensed by Kuey. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.

सार–बृज के भित्ति चित्रों ने श्री कृष्ण के आलौकिक रूप को अपने भीतर संरक्षित किया है, ये रूप पीढ़ी दर पीढ़ी उस नयी सामाजिक संरचना में शामिल हुआ है जो बृज क्षेत्र में श्रीकृष्ण की भक्ति की वजह से भरी है। इन भित्ति चित्रो ने श्रीकृष्ण के रूप में वर्णित आलौकिक भाव को एक प्रकार की जीवन रेखा प्रदान की है जहां ये रूप शब्दो से परे चित्रित रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानानांतरित हो रहा है। कहा जाता है की एक समय वो था जब सूरदास और रसखान के पदो पर आधारित भित्ति चित्र बृज में अस्तित्व में आए थे और आज वो समय है जब इन भित्ति चित्रों को प्रेरणा मानकर नया साहित्य लिखा जा रहा है।

भित्ति चित्रो में निहित श्रीकृष्ण के अलौकिक रूप को एक नये इतिहास परक सोच के साथ भी देखा जा सकता है। ऐसा तब संभव है जब इन चित्रों को मथुरा के इतिहास में हुये सत्ता परिवर्तन और उसके बाद आए सांस्कृतिक बदलावो से जोड़ा जाये उपरोक्त परिकल्पना को और सुदृढ़ करने के लिए हम मथुरा के इतिहास पर नजर डाल सकते है।

मोटे मोटे तौर पर ये देखा जा सकता है की आर्यों के आगमन के बाद से ही इस स्थान ने भारत के इतिहास के प्रमुख परिवर्तनों में हिस्सा लिया है। श्रीकृष्ण द्वारा मथुरा में गोप संस्कृति के विकास को भारत में आर्यों के पदार्पण और विस्तार से जोड़ा जा सकता है। इसके अतिरिक्त इसी क्रमिक सांस्कृतिक विकास का दूसरा दौर तब आता है जब भारत में जैन धर्म का प्रादुर्भाव होता है और वैदिक कर्मकांडो का संकेन्द्रण पुरोहितो द्वारा बताए मार्ग के स्थान पर व्यक्ति द्वारा की जा रही तपस्या और साधना की और मुड़ गया।

मथुरा की भूमि और बृज के भित्ति चित्रों ने इस यात्रा के तीसरे पड़ाव में बुद्ध धर्म का प्रादुर्भाव भी देखा, बौद्ध धर्म राजा और प्रजा दोनों के लिए एक सरलीकृत संस्करण के रूप में सामने आया, भित्ति चित्रो ने इस सरलीकरण को बड़े ही भक्तिभाव से स्वीकार किया। मथुरा और बृज के भित्ति चित्रों का अध्ययन करते समय सबसे आवश्यक मोड तब आता है जब हम भक्ति रस से सरोबार इन चित्रों में श्री कृष्ण भक्ति की अविरल धारा को बहते हुए देखते हैं। श्रीकृष्ण भक्ति के प्राचीन स्वरूप से लेकर भक्ति मार्ग के उद्भव तक संस्कृति की हर करवट को इन चित्रों में ढूंढा जा सकता है।

ब्रज क्षेत्र के विविध मन्दिरो में उपलब्ध भित्तियो और छतों पर अंकित सजीव चित्र आज भी किसी को अपनी और आकर्षित कर सकते हैं। श्री कृष्ण की लीला को प्राचीन विश्व से आधुनिक युग तक एक तार में बांधते ये चित्र पिछली कई शताब्दियों से हर युग में श्री कृष्ण के एक सर्वव्यापी रूप का बखान करते आ रहे हैं। इस सर्वव्यापी रूप को हर बार नए शब्द मिलते हैं बृज के साहित्य में और इसे चित्रांकित करती है बृज की भित्ति चित्र परंपरा एक्कीसवी सदी के दूसरे दशक में ऐसे शोध नितांत आवशयक हैं जहां पर कृष्ण के इस सर्वव्यापी रूप को एक्कीसवी सदी के समग्र कलेवर में ढ़ाल कर अगली पीढ़ियो के लिए सहेजा जा सके।

ब्रज क्षेत्र के विभिन्न कलाकारो एवं साहित्यकारो द्वारा प्रस्तुत किए शब्द चित्र और उनपर आधारित भित्ति चित्र छाया चित्रों के रूप में पत्र–पत्रिकाओ में चिरकाल तक सुरक्षित रहें है। इसके अतिरिक्त इन्हे बृज क्षेत्र के मंदिरो में जगह मिली है जहां पर ये चित्र एक धार्मिक परंपरा और प्रचलित संस्कृति का हिस्सा भी बन चुके हैं। इसके कई उदाहरण हमें सांझी कला के चित्रों में मिल सकते हैं जहां चित्रों का प्रमुख विषय राधा कृष्ण या फिर बृज में खेली गयी श्री कृष्ण की कोई एक विशिष्ट लीला है।

छवि **1:–** उपरोक्त चित्र में सांझी शैली में बने दो चित्र देखे जा सकते हैं। स्टेंसिल का प्रयोग, रंगो का संयोजन और बार्डर का प्रादुर्भाव तीनों शैलिया सांझी चित्रो से प्रभवित है। इनका विषय वस्तु विशुद्ध रूप से बृज से संबन्धित है जहां पर श्रीकृष्ण और राधा के प्रेम को भावनात्मक अभिव्यक्ति बनाया गया है एवं बृज के वन पार्श्वभूमि के रूप में चिन्हित हैं।

सांझी शैली में बने उपरोक्त दोनों चित्रों की प्रतिकृतियां आज बाजारों में साज–सज्जा के सामान के रूप में बेची जा रही है। यह एक सकारात्मक पहल है, इससे ये साबित होता है की बृज के भित्ति चित्रों की परंपरा में संग्रहीत कुछ शैलियां आज की प्रचलित एवं प्रसिद्ध संस्कृति का एक अभिन्न हिस्सा हैं। मगर ऐसा कहते समय हम उस अंधकार को भी नकार सकते जो इन चित्रों के ऐतिहासिक आंकलन के समय देखा गया है । जिन–जिन मन्दिरों के भित्ति चित्रों का शोधपरक दृष्टि से अवलोकन हुआ वहाँ ऐतिहासिक जानकारी के रूप में अत्यल्प प्रमाण संग्रहीत किए गए हैं । इन चित्रों के वर्तमान अस्तित्व को अल्पत्व से बहुत्व की ओर तथा संकीर्ण से विस्तीर्ण की ओर ले जाने की नितांत आवश्यकता है और इस विषय पर गंभीर शोध किए जाने चाहिए।

बृज के भित्ति चित्र में निहित भावपक्ष एवं कला पक्ष जनित शक्ति एवं अन्य विधाओ से संबंध :

इतिहास एवं चित्रो के परस्पर संबंध को प्रतिस्थापित करने से संस्कृति का उद्‌गम होता है तथा बहुत सारे रीतिरिवाज अपने आप ही अगली पीढ़ी के पास पहुँच जाते हैं। श्री कृष्ण का मोर मुकुट एक ऐसा ही उदाहरण है। साहित्यकारो ने इसे बड़ी प्रचुरता से अपने पदो एवं रचनाओ में शामिल किया उसके बाद चित्रकारों ने भी श्री कृष्ण की बाल्यावस्था के चित्रों में इस मोर मुकुट को उचित स्थान दिया। आज ये मोर मुकुट श्रीकृष्ण की पहचान के रूप स्थापित है, जन्माष्टमी के दिन जब छोटे बच्चों का श्री कृष्ण के रूप में श्रृंगार किया जाता है तो ये मोर मुकुट उस श्रृंगार के एक आवश्यक तत्व के रूप में उपस्थित होता है।

सार रूप में ये कहा जा सकता है की इतिहास या संस्कृति के परिपेक्ष्य से यदि चित्रों को जोड़ा जाये तो सबसे समीचीन एवं प्रसिद्ध दृष्टांत हमें मिलते हैं। एक कहावत के अंतर्गत कहा गया है की एक चित्र हजार शब्दो के बराबर होता है। बृज के भित्ति चित्र भी हजारों शब्दों में रचे गए पदों और साहित्य को अपने अंदर समेटे हैं। ये चित्र साबित करते हैं की चित्रकार अच्छा हो तो एक चित्र के भीतर वह शक्ति होती है कि वो दर्शक दीर्घा में खड़े लोगों को उस युग की यात्रा करवा दे जिसमें वो चित्र बनाया गया है।

लोककला के रूप में चित्रकला एवं इसका ऐतिहासिक महत्व :

बृज की भित्ति चित्रकला को लोककला के रूप में देखने पर हम पाते हैं की ये लोककला बृज के इतिहास और जनभावनाओ के बीच एक सेतु का कार्य करती है। यहाँ पर लेखिका मन्जुला चतुर्वेदी की पुस्तक ''भारतीय लोककला के अभिप्राय'' में उपस्थित कलाओं की रूपतामक व्याख्या का उल्लेख किया जा सकता है । मंजुला चतुर्वेदी की ये पुस्तक संस्कृति, लोककला और चित्रों में उपस्थित अभिव्यक्ति को एक तारतम्य में जोड़ने की कला भी सिखाती है। बृज के चित्रों की अभिव्यक्ति में साहित्य, धर्म और संस्कृति का एक अनूठा तारतम्य मिलता है जिसकी वजह से आज भी इन चित्रों की प्रतिकृतियां व्यावसायिक रूप से सफल है और एक छोटे मोटे कला उद्योग का संचालन कर रहीं हैं ।

बृज के चित्रों को डॉक्टर सुमन पाण्डेय द्वारा लिखित 'अजन्ता के भित्ति चित्रों में अंकित वस्त्र एवं वेषभूषा का आलोचनात्मक अध्ययन' में प्रस्तुत किए गए मानदंडों के रूप में भी देखा जा सकता है। संस्कृति एवं इतिहास को एक साथ देखकर निष्कर्ष निकालने की विधा पर बल देती हुयी ये पुस्तक चित्रकला की महत्ता को इतिहास से जोड़ती है। श्रीकृष्ण के रूपांकन में उनके बांसुरी को अपनी धोती में खोंसना एक इसी प्रकार का उदाहरण है। सूर और रसखान के पदों में कमरिया और बांसुरी का प्रचुर उपयोग मिलता है। बृज के भित्ति चित्रों में श्रीकृष्ण का रूपांकन करते समय हम पाते हैं की चित्रकारों ने बड़ी बारीकी से इस बांसुरी और कमर पर लिपटे एक अतिरिक्त वस्त्र को चित्रों में स्थान दिया है (चतुर्वेदी, 1987) ।

डॉक्टर सत्येन्द्र द्वारा लिखित पुस्तक 'ब्रज साहित्य का इतिहास' मे पाठक को संस्कृति के स्वरूप, क्षेत्र, विस्तार तथा साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि से अवगत कराया गया है। इसे एक सुखद संयोग ही मानना चाहिए की

इस पुस्तक में दिये गए कई विवरण बृज में उपस्थित भित्ति चित्रों में भी नजर आते हैं । उदाहरण के तौर पर इस पुस्तक में बृज में उपस्थित वनों के बारे में विस्तार से लिखा गया है। बृज में उपस्थित भित्ति चित्रों एवं अन्य चित्रों में भी ये वन नजर आ जाते हैं। इस पुस्तक के आधार पर चित्रों का अध्ययन करके ये कहा जा सकता है की "साहित्य और चित्रो का एक साथ अवलोकन इस शोध की सब से महत्वपूर्ण परंपरा है जिसकी मदद से कुछ ऐसे निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं जिनमें संस्कृति एक विशिष्ट योगदान प्रदान कर सकती है।
डॉक्टर प्रभुदयाल मीतल द्वारा रचित एक विवेचनात्मक, व्यापक ग्रन्थ का शीर्षक है "ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास"। इस ग्रंथ के अनुसार ब्रजका साहित्य, ब्रज की कलाएँ, लोक कलाएँ और राधा कृष्ण के विविध लीला चित्रो का निरूपण अपने आप में एक साहित्यकोश है और बृज के भित्ति चित्रों ने इस साहित्य कोश को एक चित्रकोश में परिवर्तित कर दिया है जिसकी वजह से ये संस्कृति अब आने वाली पीढ़ियो के लिए और भी सुग्राह्य हो गयी है (स्वरूप, 1978) ।

चित्रों में शास्त्रीयता और शैली विकास में संस्कृति का योगदान :

संस्कृति और कला के जुड़ी शैलियो को एंथ्रोपोलोजी के आधार पर भी देखा जा सकता है। विशेषज्ञ ये भी मानते हैं की विभिन्न ललित कलाए स्वर, शब्द और रेखाओ के माध्यम से बने चित्र मानव भावनाओ को पल्लवित एवं पोषित करने के लिए विकसित किए गए। यहाँ पर कलाकृतियों से जुड़ी शास्त्रीयता की परिभाषा का बखान करना भी आवश्यक हो जाता है। एक प्रचलित परिभाषा के अनुसार संगीत, नृत्य और भित्ति चित्रो में जो तत्व लोकप्रियता की पराकाष्ठा को छू लेते हैं, अगली पीढ़ी के कलाकार उन तत्वो को नियमित रूप से अपनी कलाकृतियो में शामिल करने लगते हैं। इस प्रकार कई ऐसे तत्व विकसित हो जाते हैं जिनकी पुनरावृत्ति कला को बोझिल बनाने के बजाय अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम बन कर उभरती है (जैन,1981) ।
बाद में गुरु शिष्य परंपरा के अंतर्गत जब यही तत्व एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्थानांतरित होते रहते हैं तो इन तत्वो को शास्त्रीय तत्वो का सम्मान दे दिया जाता है। यहाँ पर ललित कला की अन्य विधाओ का उल्लेख करना भी आवशयक हो जाता है जिनके बारे में विभिन्न कलाविदों ने भावनाओ और उद्गारों को व्यक्त करने के तरीको का विश्लेषण किया है (नागर, 1980) ।
ऐसे ही एक विश्लेषण से पता चलता है की आदि मानव ने भी इसी प्रकार कला के तत्वो को विकसित किया था और बाद में ये तकनीके परंपरा बन गयी। सतत प्रसिद्धि के बाद इन्हे कला का शास्त्रीय तत्व भी मान लिया गया। बृज के भित्ति चित्रों में विकसित हुये तत्व संरक्षित रहे क्यूंकि उन्हे धार्मिक प्रश्रय मिला। ये तत्व शास्त्रीय तत्व भी बन गए क्यूंकि इनमें भगवान का रूपांकन किया जाना था। भगवान के रूपांकन के समय साहित्य से जुड़ी बाध्यताएं बढ़ जाती है तथा रचनात्मक अभिव्यक्ति में समझौता करना पड़ता है। बृज के भित्ति चित्रों में विषय वस्तु के साथ ऐसी बाध्यताएं तो दृष्टिगोचर होती है परंतु स्थानीय प्रभाव जैसे ही सक्रिय होते हैं एक नयी शैली बन जाती है।
माना जाता है की चित्रकला की मेवाड़ शैली और बुन्देली कलम पर बृज के भित्ति चित्रों का गहरा प्रभाव है। ऐसा इसलिए हैं क्यूंकि इन चित्रों में जब जब श्रीकृष्ण की लीलाओ का अंकन किया गया, मूल प्रभाव कहीं ना कहीं बृज के भित्ति चित्रों से लिए गए। ऐसा ही एक उदाहरण पिछवाई शैली के चित्रों में भी देखा जा सकता है (वर्मा, 1990)।

छवि 2 पिछवाई शैली में बने बृज के कुछ भित्ति चित्र, शैलीगत विशेषताओ के अंतर्गत इन चित्रो का रंग संयोजन चटख है परंतु विषय वस्तु में बृज के चित्रो की छाप स्पष्ट नजर आती है।

बृज के चित्रो में श्रीकृष्ण अवतार की विशद व्याख्या :

बृज के भित्ति चित्रो के अध्ययन के दौरान प्राथमिक रूप में ही ये समझा जा सकता था कि सारे विश्व के लिए कृष्ण का जो रूप है वह अत्यंत गंभीर है। सारा विश्व उन्हे सोलह कलाओ से परिपूर्ण ज्ञानी, विज्ञानी और समाजशास्त्री के रूप में जानता है। विश्व में बसे लोग श्री कृष्ण को एक ऐसे समाजशास्त्री के रूप में देखते हैं जिन्होने समाज की सबसे छोटी इकाई यानि व्यक्ति को कर्म का मार्ग दिखा कर एक ऐसे समाज की संरचना की कल्पना की जो हर मायने में आदर्श समाज हो। इस तथ्य की गहराई को समझने के लिए हम भगवान विष्णु के ही एक और अवतार श्रीराम से श्रीकृष्ण के अवतार की तुलना कर सकते हैं (शर्मा, 1989)।

श्रीराम के अवतार में भी एक आदर्श समाज की स्थापना की बात कही गयी है, मगर इस अवतार में समाज की संरचना का आवशयक तत्व था वह विधि या कानून जिसके माध्यम से समाज की रचना होनी थी। श्री कृष्ण के उपदेशो में विधि से ज्यादा व्यक्ति के आत्मानुशासन पर जोर दिया गया। इस दर्शन का सार ये था कि यदि व्यक्ति स्वतरू ही अनुशासित है तो समाज खुदबखुद अनुशासित हो जाएगा। श्रीकृष्ण के चरित्र की ये विशेषता ब्रज क्षेत्र के भित्ति चित्रों में भी नजर आती है जहां पर ज्यादतर चित्रों में ऐसे तत्वों का समाकलन किया गया है जो नितांत व्यक्तिगत भावनाओ के परिमार्जन से भक्ति मार्ग को सुलभ करते हैं और उन परिस्थितियो का भी बखान करते हैं जिनमें एक आदर्श समाज का निर्माण आसानी से हो सके (उपाध्याय, 1939)।

कई इतिहासकार मानते हैं की भारत की मुख्य सामाजिक संरचना में श्रीकृष्ण का जो योगदान है वह मुखर रूप से मथुरा की संस्कृति से ही निकल कर आया है। द्वापर युग में भारत का समाज जटिल हो चला था। इस समय रिश्तो में छिपी जटिलताए सामने निकल कर आ रही थी और पाप अथवा पुण्य की परिभाषाओं को चुनौती दे रहीं थी। मथुरा के भित्ति चित्र द्वापर युग में प्रचलित जटिलताओं के मध्य एक सरल संस्कृति की वकालत करते नजर आते हैं, इस संस्कृति के अंतर्गत सरल भाव से प्रभु की वो भक्ति की जा सकती थी जिसके अंत में किसी भी प्राणी को मोक्ष की प्राप्ति हो सकती थी (गरोला, 1980)।

कथानक का उचित प्रस्तुतीकरण और चित्रविन्यास में संपूर्णता :

बृज के कई चित्रों की श्रृंखला को आज की चित्रकथाओं की संस्कृति से भी जोड़ा जा सकता है। ऐसा ही एक उदारहण है बालक ध्रुव की लीला का है भौगोलिक दृष्टिकोण से ये लीलास्थली आज भी उपेक्षित है। जिस पर किसी का ध्यान भी नहीं जाता।

छवि 3 मथुरा के महोली स्थित ये टीला धीरे धीरे जीर्ण शीर्ण अवस्था में आता जा रहा है। यहाँ जो रचना बनाई गयी है उसकी प्रासंगिकता यहाँ से जुड़ी कथा के साथ उतनी समीचीन नहीं है।

चित्र और साहित्य किस प्रकार से किसी कहानी को संरक्षित रख सकते हैं इसका एक अनूठा उदारहण भक्त ध्रुव की कथा में देखा जा सकता है (अग्रवाल, 1959)। मथुरा के पास महोली गाँव में स्थित ध्रुव टीला नामक स्थान अपने आप में एक अनूठी कथा समेटे हुये हैं। ये कथा एक बालक की है जिसे जीवन का सार समझाने के लिए स्वयं भगवान विष्णु को धरती पर आना पड़ा था। यह घटना उस स्थान पर हुयी थी जिसे मधुबन के नाम से जाना जाता है । इस घटना को दर्शाते भित्ति चित्र मथुरा में कई स्थानो पर पाये गए हैं। उपरोक्त छवि में इन चित्रो की एक प्रतिकृति प्रस्तुत की गयी है।

छवि 4 चित्र के भीतर संरक्षित कथानक एवं पार्श्व में संरक्षित टीले का भौगोलिक रूप स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर है। प्रथम चित्र में नारद आगमण लीला को देखा जा सकता है। आगे के दो चित्र विभिन्न चरणों में भगवान विष्णु और ध्रुव के संवाद को दर्शाते हैं और तीसरे चित्र में ध्रुव तारे की स्थापना को इंगित किया गया है।

बालक ध्रुव की कथा और उसके बाद ध्रुव तारे के रूप में उनका स्थापन एक पौराणिक कथा है जिसे बृज के भित्ति चित्रो ने बड़ी खूबसूरती से समेटा और मथुरा में प्रचलित संस्कृतियो का सतत हिस्सा बनाए रखा। वर्तमान में इस प्रकार के कई चित्र बृज भूमि में उपलब्ध हैं जिनका अनुसंधान करके इस प्रकार की कई कहानियो को एक नया जीवन दिया जा सकता है तथा प्रचलित संस्कृति में स्थापित किया जा सकता है (हलदार, 1990)।

निष्कर्ष :

बृज के मंदिरों में बने भित्ति चित्र हिंदू धर्म की श्रेष्ठ धरोहर हैं ये भित्ति चित्र पाश्चात्य प्रभाव से मुक्त हैं अपनी अभिव्यक्ति व मौलिकता को चित्रों में स्पष्ट देखा जा सकता है। इस आधार पर ये भी कहा जा सकता है की वर्तमान शोध बृज के भित्ति चित्रों के बारे में जानकारी की दो समानांतर रेखाए खींचने में सक्षम है। पहली रेखा के अंतर्गत हम इन चित्रो को मथुरा के इतिहास के साथ जोड़ सकते हैं और दूसरी रेखा के अंतर्गत हम इन चित्रो को संस्कृति के संवाहक या फिर अग्रदूत के रूप में भी देख सकते हैं। इन कला शैलियों का प्रभाव प्रमुख रूप से चरित्रों के चेहरे एवं मोहरे के चित्रण में देखा जा सकता है। हालांकि ये प्रभाव अन्य कई शैलियों में भी बिखर गए जैसे कि पहाड़ी चित्रकला, मेवाड़ चित्रकला एवं बुन्देली कला मगर इनका मुख्य उद्भव मथुरा और वृन्दावन के भित्ति चित्रों में ढूंढा जा सकता है जहां पर कृष्ण की बाल लीलाओं और रास लीलाओं से जुड़े चित्रों पर विशेष रूप से उपलब्ध हैं।

श्री कृष्ण का विश्व स्वरूप और मथुरा वृन्दावन में उनका भक्ति स्वरूप भी बृज के भित्ति चित्रों को बाकी चित्रों से अलग करता है। इस भिन्नता की वजह से इन चित्रों को हर बार नए सांस्कृतिक कलेवर के साथ जोड़ कर कुछ ऐसे निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं जो स्थापित सत्यों के स्थानपन्न सत्यों की तरह कार्य कर सकते हैं।

संदर्भ सूची :

1. ड्रेके डी.एल. ब्रोकिमेन, (1991) मथुरा ए गेजेट्टर फ्रॉम बुक्स फ्रॉम इंडिया, आस्कर पब्लिकेशन
2. अग्रवाल, गोविन्ददास, रामनारायण : (1959) ब्रज और ब्रजयात्रा, भारतीय विश्व प्रकाशन, दिल्ली
3. अग्रवाल, श्री वासुदेव शरण (1964) 'मथुरा कला', प्रथम संस्करण
4. उपाध्याय, श्री वासुदेवः (1939) 'गुप्त साम्राज्य का इतिहास', इंडियन प्रेस एल.एम. इलाहाबाद
5. गोस्वामी, डॉ. शरण बिहारी (2001) मथुरा और ब्रज मण्डल, हिन्दी सेवा सदन
6. चतुर्वेदी, श्री गिरीश कुमारः ब्रज की लोक संस्कृति, कल्पतरू, दिल्ली, प्रथम संस्करण–1998
7. स्वरूपः ब्रज साहित्य और संस्कृति, षिक्षा ग्रन्थकार मथुरा, 1987
8. गरोला, व. (1994). भारतीय चित्रकला . इलाहाबाद रू मित्र प्रकाशन
9. जैन, म. र. (1987). नेहरू गेलरी लंदन में भारतीय कला का अपूर्व संग्रह . लंदन संस्कृति
10. नागर, स. (2001). बृज सतदल . मिशिगन राजस्थान बृजभाषा अकादमी
11. भौमिक, अ. (2011). भारतीय चित्रकला परंपरा और रवीद्रनाथ ठाकुर . मथुरा कला दीर्घा
12. मावड़ी, म. स. (2008). भारतीय कला सौन्दर्य . पटना तक्षशिला प्रकाशन
13. मुदगल, ग. (1998). बृज शोध सागर . मिशिगन विश्वविद्यालय
14. वर्मा, द. ल. (1990). पहाड़ी चित्रकला की अनूठी शैली मंडी कलम से. शिमला रू संस्कृति
15. वर्मा, ब. न. (1989). बृज भित्ति चित्र कला परंपरा . मथुरा राधा पुब्लिकेशन
16. शर्मा, द. क. (2017). मेवाड़ शैली में वल्लभ संप्रदाय का चित्रण . मथुरा : Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
17. शर्मा, ल. च. (2011)। मेरठ गोयल पब्लिशिंग हाउस
18. हलदार, अ. क. (1990). भारतीय चित्रकला .इलाहाबाद